यरूशलेम में प्रतीक्षा करना
(1:12-26)

पिछले पाठ में हमने ज़ोर दिया था कि प्रेरितों 1 अध्याय हमें उस *तैयारी* के बारे में बताता है जो कलीसिया की स्थापना से पहले आवश्यक थी। हमने उस तैयारी के दो पहलुओं अर्थात पवित्र आत्मा और मसीह की वापसी के वायदे पर ध्यान दिया। इस पाठ में हम देखेंगे कि तैयारी के लिए शिष्यों को और क्या करना था। तैयारी का यह पड़ाव तब आया जब प्रेरित यरूशलेम में प्रतीक्षा कर रहे थे।

यीशु ने अपने प्रेरितों को बताया था कि ''*यरूशलेम से लेकर* सब जातियों में मन फिराव का और पापों की क्षमा का प्रचार, उसी के नाम से किया जाएगा'' और यह कि ''जब तक [वे] स्वर्ग से सामर्थ न'' पा लें तब तक ''इसी *नगर* (अर्थात यरूशलेम) में ठहरे'' रहें (लूका 24:47, 49)। फिर, उसने उनको बताया कि पहले वे ''यरूशलेम'' में उसके ''गवाह'' होंगे (1:8)। यीशु की इच्छा स्पष्ट थी: वह चाहता था कि प्रेरित यरूशलेम में ही ठहरें।

निजी तौर पर प्रेरितों की पसन्द में यरूशलेम सबसे बाद में आता होगा। यरूशलेम में यीशु को क्रूस पर चढ़ाया गया था। यरूशलेम में उनके शत्रु रह रहे थे। उन्हें यरूशलेम से कोई लगाव नहीं रहा था; उनके घर-परिवार गलील में थे। परन्तु यीशु ने कहा था कि वे यरूशलेम में ही रहें, सो प्रेरितों 1:12 में लिखा है कि, ''तब वे जैतून नाम के पहाड़ से, जो यरूशलेम के निकट एक सब्त के दिन की दूरी पर (लगभग पौना मील) है, यरूशलेम को लौटे।''[1]

अमेरिका की, स्वाधीनता की घोषणा पर हम वहां के लोग बहुत गर्व महसूस करते हैं।[2] प्रेरित यीशु की आज्ञा के अनुसार यरूशलेम की ओर मुड़कर, अपनी ''*अधीनता* की घोषणा'' पर हस्ताक्षर कर रहे थे। वे हर हाल में प्रभु की आज्ञा का पालन करने के लिए - और उसी पर निर्भर रहने के लिए अपने आप को उसे सौंप रहे थे!

> और जब वहां [यरूशलेम] पहुंचे तो वे उस अटारी पर गए, जहां पतरस और यूहन्ना और याकूब और अन्द्रियास और फिलिप्पुस और थोमा और बरतुलमाई (नथनियल)और मत्ती और हलफई का पुत्र याकूब (छोटा याकूब) और शमौन जेलोतेस[3] और याकूब का पुत्र यहूदा (तद्दै) रहते थे (पद 13)।

नये नियम में प्रेरितों के नाम की यह चौथी और अन्तिम सूची है।[4] इस सूची में अन्तर

यही है कि इसमें केवल ग्यारह प्रेरितों के ही नाम हैं; यीशु को पकड़वाने वाले, यहूदा का नाम इस सूची से गायब है।

आयत 13 में लिखा है कि प्रेरित एक अटारी[5] (सम्भवत: वही ऊपरी कमरा, जहां उन्होंने यीशु के साथ अन्तिम भोज लिया था[6]) में ''रहते थे''। परन्तु, अब वे भय के कारण किसी अन्धेरे कमरे में इकट्ठे नहीं हुए थे जैसा कि उन्होंने यीशु के क्रूस पर चढ़ाए जाने के तुरन्त बाद किया था (यूहन्ना 20:19)। इसे लूका ने सुसमाचार के अपने वृत्तांत में इन शब्दों के साथ समाप्त किया है: ''और वे उसको दण्डवत करके बड़े आनन्द से यरूशलेम को लौट गए। और लगातार मन्दिर में उपस्थित होकर परमेश्वर की स्तुति किया करते थे'' (लूका 24:52, 53)। प्रेरित मन्दिर में अपना समय व्यतीत करते थे – और मन्दिर में रहकर उन्होंने छिपने का यत्न नहीं किया। वे अपनी प्रार्थनाएं परमेश्वर तक पहुंचाते थे!

प्रेरितों में कितना बदलाव आ रहा था – उनमें यह बदलाव इसलिए आया था क्योंकि अब उन्हें जी उठे प्रभु में विश्वास था!

स बन्ध मज़बूत होते हैं (1:12-14)

प्रेरित मन्दिर में और अटारी पर समय बिताते हुए अपनी तैयारी के जिस कठिन भाग को झेल रहे थे: वह था *प्रतीक्षा*। हम में से अधिकांश लोगों को किसी की प्रतीक्षा करना अच्छा नहीं लगता। तैयारी करने में समय लगता है, परन्तु उन्होंने इस बात की ज़रा भी परवाह नहीं की कि इसमें कितना समय लगेगा। प्रेरितों को बिल्कुल पता नहीं था कि उन्हें और कितनी प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। यीशु ने उन्हें इतना ही बताया था कि ''थोड़े दिनों के बाद,'' उन्हें पवित्र आत्मा मिलेगा, परन्तु यह समय हज़्ते, महीने या फिर सालों का भी हो सकता था।[7] यदि यह प्रजु की इच्छा थी तो वे प्रतीक्षा कर सकते थे। हमें इससे सीख लेनी चाहिए। ''यहोवा की बाट जोहता रह; हियाव बांध और तेरा हृदय दृढ़ रहे; हां, यहोवा ही की बाट जोहता रह'' (भजन संहिता 27:14)।

इससे हमें दूसरों के साथ प्रतीक्षा करने में सहायता मिलती है। आयत 14 उनके बारे में भी बताती है जो प्रेरितों के साथ प्रतीक्षा कर रहे थे: ''ये सब कई स्त्रियों और यीशु की माता मरियम और उनके भाइयों के साथ एक चित्त होकर प्रार्थना में लगे रहे।'' अगली आयत बताती है कि एक जगह वे 120 के लगभग इकट्ठे थे।[8] यह मण्डली कितनी दिलचस्प होगी। उसमें ''स्त्रियां'' थीं। सम्भवत: उनमें मरियम और मारथा[9] अवश्य होंगी, प्रेरितों[10] की पत्नियां भी होंगी, वे स्त्रियां भी होंगी जिन्होंने यीशु और उसके शिष्यों की सेवा की थी,[11] वे भी होंगी जो क्रूस पर चढ़ाए जाने के समय उसके साथ थीं,[12] और वे स्त्रियां भी होंगी जो यीशु के शरीर का अभिषेक करने गई थीं।[13] यीशु की माता मरियम के वहां होने का विशेष तौर पर उल्लेख किया गया है (पवित्र शास्त्र में उसका यह अन्तिम उल्लेख है[14])।

आगे, यीशु के भाइयों के नाम दिए गए हैं। यीशु के जीवनकाल में उसके भाइयों ने उस पर विश्वास नहीं किया था (यूहन्ना 7:5)। मृतकों में से जी उठने के बाद, यीशु ने अपने

भाइयों में सबसे बड़े भाई, याकूब को विशेष दर्शन दिया।[15] निस्संदेह, याकूब ने जो देखा, वह उसने अपने अन्य भाइयों: यूसुफ, शमौन और यहूदा को भी बताया (मत्ती 13:55)। अब वे सब प्रेरितों के साथ इकट्ठे हो गये थे।

वे लोग भी उस समय उनके साथ होंगे जिन्हें हम जानते हैं जैसे-लाज़र, नीकुदेमुस, अरमितियाह का यूसुफ, जक्कई आदि। कितना आकर्षण होगा इस मण्डली में। आप जानना नहीं चाहेंगे कि प्रतीक्षा करते हुए वे क्या बातें करते होंगे? आपको उनकी उत्सुकता के बारे में नहीं पता जो प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी?

हो सकता है कि हम उनकी प्रतीक्षा के समय के बारे में सब कुछ न जान पाएं, परन्तु छोटी सी इस मण्डली की बहुत सी बातें हमें मालूम हैं। उनके एक काम का विशेष रूप से उल्लेज़ हुआ है: वे प्रार्थना में लगे रहते थे (प्रेरितों 1:14)। लूका 24:53 हमें बताता है कि वे परमेश्वर की स्तुति करते थे। प्रार्थना करते हुए शिष्यों के बारे में हम यहां पहली बार पढ़ते हैं,[16] परन्तु यह उनकी अन्तिम प्रार्थना नहीं थी। प्रेरितों के काम की पुस्तक के लगभग प्रत्येक पृष्ठ पर प्रार्थना का वर्णन है।

हमें प्रेरितों के ''एक चित्त'' होने का पता चलता है: ''ये सब ... *एक चित्त होकर* प्रार्थना में लगे रहे'' (प्रेरितों 1:14)। ''एक चित्त'' शब्द का उल्लेख प्रेरितों के काम में छह बार किया गया है। प्रतीक्षा करने के लिए इकट्ठा होने वालों पर ध्यान दीजिए। ''एक चित्त'' अर्थात एक मन वे ऐसे ही नहीं हो गए थे: उनमें से कइयों के बीच क्रूस पर यीशु की मृत्यु के कुछ समय पूर्व ही विवाद हुआ था (लूका 22:24)। कई तो प्रभु को छोड़ गए थे या उसका इन्कार कर गए थे। (किसी पर अंगुली उठाना कितना आसान रहा होगा!) यीशु के भाई जो उसकी हंसी उड़ाते थे, अब उसके शिष्यों के साथ मिलकर बैठने लगे। इस मण्डली के ''एक चित्त'' होने के लिए कुछ आंसू बहे होंगे; कुछ अहंकार को त्यागना पड़ा होगा। ये शिष्य मन की एकता को पाने में सफल हो गए क्योंकि वे अपने इस विश्वास में एक थे कि प्रभु जी उठा है!

''यहोवा की बाट जोहने'' के लिए इससे अच्छी बात और कोई नहीं हो सकती कि हम अपने साथ, परमेश्वर के साथ और, अपने मसीही भाइयों के साथ संबंधों को मज़बूत करने का यत्न करें!

खाली हुए पद को भरने के लिए नियुक्ति (1:15-26)

प्रतीक्षारत प्रेरितों और अन्य शिष्यों के लिए एक और कार्य करना आवश्यक था अर्थात उन्हें यहूदा द्वारा छोड़े गए पद को भरने का काम पूरा करना था। 1:21, 22 में, पतरस ने कहा, ''... उचित है कि उनमें से एक व्यक्ति हमारे साथ उसके (अर्थात यीशु के) जी उठने का गवाह हो जाए।'' पिन्तेकुस्त के दिन से पहले खाली हुए पद को भरना आवश्यक था।

यह पद भरना अनिवार्य क्यों था? यह कोई नई परज़रा आरज़्भ करने के लिए नहीं था कि प्रत्येक प्रेरित के मरने के बाद उसके स्थान पर किसी को नियक्त किया जाए। यूहन्ना के भाई याकूब की मृत्यु के पश्चात (प्रेरितों 12:2) उसके स्थान पर किसी दूसरे की

नियुक्ति का कोई उल्लेख नहीं है। परन्तु, पतरस ने कहा कि यहूदा के स्थान को भरा जाना आवश्यक था क्योंकि वह, ''सेवकाई और प्रेरिताई का पद ... छोड़ कर ... गया'' था (आयत 25)। यहूदा का स्थान भरा जाना आवश्यक था, इसलिए नहीं कि वह मर गया, बल्कि इसलिए कि वह गिर गया।

उन्होंने यहूदा के स्थान पर एक व्यक्ति की नियुक्ति की आवश्यकता को महसूस किया ताकि पवित्र आत्मा के आने तक, प्रेरितों की मण्डली फिर से, बारह बनकर, दृढ़ हो जाए। हमें आश्चर्य होता है कि, ''पिन्तेकुस्त के दिन *बारह* प्रेरितों का होना क्यों अनिवार्य था?'' यह भी एक अच्छा प्रश्न होगा कि ''यीशु ने *प्रथम स्थान पर* – दस, पन्द्रह या बीस के बजाय – बारह लोगों को ही क्यों रखा?'' स्पष्टतया यीशु ने बारह का चुनाव इस्राएल के बारह गोत्रों को ध्यान में रखकर किया था। अपनी निजी सेवकाई के दौरान यीशु ने अपने शिष्यों को मिलने वाले पुरस्कार के बारे में इन शब्दों में कहा था, ''मैं तुम से सच कहता हूं, कि नई उत्पत्ति से जब मनुष्य का पुत्र अपनी महिमा के सिंहासन पर बैठेगा, तो तुम भी जो मेरे पीछे हो लिए हो, बारह सिंहासनों पर बैठकर *इस्राएल के बारह गोत्रों* का न्याय करोगे'' (मत्ती 19:28)। फिर, अन्तिम भोज के समय, यीशु ने अपने शिष्यों से कहा:

> परन्तु तुम वह हो, जो मेरी परीक्षाओं में लगातार मेरे साथ रहे, और जैसे मेरे पिता ने मेरे लिए एक राज्य ठहराया है, वैसे ही मैं भी तुम्हारे लिए ठहराता हूं, ताकि तुम मेरे राज्य में मेरी मेज़ पर खाओ पिओ; वरन सिंहासनों पर बैठकर *इस्राएल के बारह गोत्रों* का न्याय करो (लूका 22:28–30)।

इन आयतों को देखकर आप इस प्रश्न में न उलझें कि प्रेरितों ने उनका न्याय कैसे किया (मूलतः, उन्होंने वचन के द्वारा न्याय किया।[17]) बल्कि, *बारह* प्रेरितों, *बारह* सिंहासनों *और बारह* गोत्रों पर दिए गए बल पर ध्यान दीजिए। राज्य की स्थापना का समय निकट आ चुका था, इसलिए यह अत्यावश्यक था कि प्रेरितों की गिनती पूरी बारह हो।[18]
इस कारण हम पढ़ते हैं:

> और उन्हीं दिनों में पतरस भाइयों[19] के बीच में (जो एक सौ बीस व्यक्ति के लगभग इकट्ठे थे), खड़ा होकर कहने लगा, हे भाइयो, अवश्य था कि पवित्र शास्त्र का वह लेख पूरा हो जो पवित्र आत्मा ने दाऊद के मुख से[20] यहूदा के विषय में जो यीशु के पकड़ने वालों का अगुआ था, पहले से कही थी। क्योंकि वह तो हम में गिना गया, और इस सेवकाई में सहभागी हुआ (1:15–17)।

पतरस लौटकर अगुआई करने लगा था। वह बहुत भयानक रीति से गिरा था, किन्तु यीशु ने उसे गलील सागर के किनारे फिर से लगा दिया था (यूहन्ना 21:15–17)।

पतरस ने ज़ोर देकर कहा कि यहूदा वास्तव में प्रेरित था: ''वह तो हम में गिना गया और इस सेवकाई में सहभागी हुआ।'' अन्य सभी प्रेरितों की तरह यहूदा को भी उसकी

योग्यता और क्षमता[21] के कारण ही चुना गया और जैसे दूसरे प्रेरितों को अधिकार और सौभाग्य प्राप्त हुआ था वैसे ही उसे भी सब कुछ मिला था। यदि शेष प्रेरितों के पास दुष्ट आत्माओं को निकालने और सब प्रकार के रोगों को दूर करने का अधिकार था, तो यहूदा के पास भी था (मत्ती 10:1)। यहूदा की मुश्किल यह नहीं थी कि ''वह आरम्भ से ही शैतान था।''[22] ऐसा नहीं कि उसने धीमी शुरुआत की और वह नीचे ही रहा हो। बल्कि उसने तो बड़े जोश के साथ आरम्भ किया था और बाद में गिर गया था। यहां पर यीशु के प्रत्येक शिष्य के लिए एक चेतावनी है! (देखें 1 कुरिन्थियों 10:13.)

शास्त्र में यहां पर, अन्यजातियों में से अपने पाठकों को समझाने के लिए कि यहूदा का क्या हुआ, लूका ने पतरस के शब्दों में जोड़ने के लिए उसे बीच में ही रोक दिया:[23]

> (उसने अधर्म की कमाई से एक खेत मोल लिया; और सिर के बल गिरा, और उसका पेट फट गया, और उसकी सब अन्तड़ियां निकल पड़ीं। और इस बात को यरूशलेम के सब रहने वाले जान गए, यहां तक कि उस खेत का नाम उनकी भाषा में हकलदमा[24] अर्थात लोहू का खेत पड़ गया) (आयत 18, 19)।

यहूदा की मृत्यु का यह वर्णन मत्ती 27:3-9 से थोड़ा भिन्न है, परन्तु दोनों ही वर्णन एक दूसरे के विपरीत नहीं हैं।[25] बल्कि, दोनों ही एक दूसरे के सम्मानसूचक हैं; एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों ही वर्णनों को मिलाएं तो वे उस एक जीवन के दु:खद अन्त के बारे में बताते हैं जिसमें पर्याप्त क्षमता थी। पश्चात्ताप से भरे, यहूदा ने चांदी के तीस सिक्के[26] फेंक दिए और बाहर जाकर खुद को फांसी लगा ली। लोगों द्वारा तिरस्कृत उसकी मृत देह तब तक टंगी रही जब तक रस्सी[27] गल कर उसकी लाश गिर कर फट न गई। उसकी लाश, कुम्हार के खेत में एक पत्थर पर गिरी और फट गई।[28] लूका ने शब्दों के द्वारा उसकी भयानक ही नहीं बल्कि घृणात्मक तस्वीर दिखाई है - सम्भवत: उसने जानबूझ कर ऐसा किया। लूका की इच्छा होगी कि मसीही लोग प्रभु के साथ धोखा करने वाले का भयानक रूप और धोखे का अंजाम देख लें।

20 आयत में हम पतरस के शब्दों पर आते हैं। आयत 16 में उसने कहा था कि ''अवश्य था कि पवित्र शास्त्र का वह लेख पूरा हो जो पवित्र आत्मा ने दाऊद के मुख से यहूदा के विषय में कहा था।'' आयत 20 में पतरस ने वह कह ही दिया जो वह कहना चाह रहा था ''क्योंकि भजन संहिता में लिखा है, कि उसका घर उजड़ जाए, और उसमें कोई न बसे और उसका पद कोई दूसरा ले ले।'' पतरस ने भजन संहिता 69:25 और भजन संहिता 109:8 में से दाऊद के शब्दों को उद्धृत किया था। दोनों भजनों में दाऊद के शक्तिशाली शत्रुओं के बारे में बताया गया है, जो ऊंचे पदों पर थे। ये लोग दाऊद के विरुद्ध हो गए और इन्होंने उसे सिंहासन से उतारने का भरसक यत्न किया। दाऊद ने प्रार्थना की कि परमेश्वर *उनका* नाम जीवन की पुस्तक से काट डाले, और उस पद को कोई दूसरा ले ले। वस्तुत: पतरस ने कहा कि दाऊद, वास्तव में, मसीह का प्रतीक है, ये पद यहूदा द्वारा यीशु के

पकड़वाए जाने और उसके पद पर किसी और के बैठने का पूर्वसंकेत थे।[29]

यह सब तो प्रेरितों पर पवित्र आत्मा के आने से पहले हुआ, फिर पतरस को कैसे पता चला कि यहूदा के स्थान पर किसी और का होना आवश्यक था, और उसे यह कैसे पता चला कि वे हवाले यहूदा के रिक्त पद को भरने की ही बात करते हैं? शायद पतरस को विशेष तौर पर यह प्रकाश मिला था जिसे लिखा नहीं गया। हो सकता है कि उसे ये बातें यीशु के पुनरुत्थान के बाद के उन चालीस दिनों में पता चली हों जब यीशु ने ''पवित्र शास्त्र बूझने के लिए उनकी समझ खोल दी थी'' (लूका 24:45)। पतरस को यहूदा के स्थान पर नियुक्त करने के लिए व्यक्ति की योग्यता का भी पता चल गया था:

> इसलिए जितने दिन तक प्रभु यीशु हमारे साथ आता जाता रहा, अर्थात यूहन्ना के बपतिस्मा से लेकर उसके हमारे पास से उठाए जाने तक, जो लोग बराबर हमारे साथ रहे - उचित है कि उनमें से एक व्यक्ति हमारे साथ उसके जी उठने का गवाह हो जाए (पद 21, 22)।

पतरस के अनुसार प्रेरित होने के लिए तीन योग्यताएं होनी आवश्यक थीं:[30] (1) यहूदा का पद उनमें से एक पुरुष को मिले जो प्रेरितों के साथ रहते थे; यह पद किसी स्त्री को नहीं दिया जाना था।[31] कलीसिया के आरम्भ से ही, पुरुष द्वारा अगुआई पर अधिक बल दिया गया है। (2) यहूदा का रिक्त पद उसी व्यक्ति को मिल सकता था जो यीशु की निजी सेवकाई में उसके व प्रेरितों के साथ रहा हो। यीशु के साथ चलने वालों में वे बारह ही नहीं थे; एक बार उसने सत्तर जनों को प्रचार के लिए भेजा था (लूका 10:1)। इस योग्यता वाले व्यक्ति को गवाह होने के लिए चुने जाने का उद्देश्य इस बात की विश्वसनीयता को पक्का करना था कि सचमुच ही यीशु मुर्दों में से जी उठा था और वह कोई झूठा नहीं है। जो लोग यीशु को अच्छी तरह जानते थे, वे अच्छी तरह बता सकते थे कि उन्होंने इसी यीशु को देखा या फिर वह कोई और था। (3) यहूदा का रिक्त स्थान लेने वाले के लिए यह आवश्यक था कि वह पुनरुत्थान का गवाह हो।[32] अन्य शब्दों में कहें तो, उसने यीशु को मृतकों में से जी उठने के बाद देखा हो। प्रजु के जी उठने के बाद उसे कइयों ने देखा था (1 कुरिन्थियों 15:6)।

परन्तु, लगता है, कि यह योग्यता केवल दो ही पुरुषों में पाई गई: ''तब उन्होंने दो को खड़ा किया, एक यूसुफ को, जो बर-सबा कहलाता है,[33] जिसका ''उपनाम'' यूसतुस है,[34] दूसरा मत्तिय्याह को'' (आयत 23)। इन पुरुषों के बारे में पवित्र शास्त्र इससे अधिक नहीं बताता,[35] परन्तु इन दोनों शिष्यों में अवश्य ही कुछ अलग था!

क्योंकि यहूदा के स्थान पर केवल एक ही व्यक्ति की आवश्यकता थी और इन दोनों में अपेक्षित योग्यताएं थीं, इसलिए मामला परमेश्वर के हाथ में दे दिया गया:

> और यह कह कर प्रार्थना की, कि ''हे प्रभु, तू जो सब के मन को जानता है, यह

प्रकट कर कि इन दोनों में से तूने किस को चुना है कि वह इस सेवकाई और प्रेरिताई का पद ले जिसे यहूदा छोड़ कर गया था'' (पद 24, 25)।

पुस्तक में प्रार्थना का यह दूसरा वर्णन है और प्रार्थना के शब्द हमें यहां पहली बार मिलते हैं, परमेश्वर को *कार्दियाग्नोस्ता* अर्थात सबके मन को जानने वाला कह कर सम्बोधित किया गया है। ''यहोवा का देखना मनुष्य का सा नहीं है; मनुष्य तो बाहर का रूप देखता है, परन्तु यहोवा की दृष्टि मन पर रहती है'' (1 शमूएल 16:7)।

ध्यान दीजिये कि यहूदा के अन्त को कितनी बारीकी से ब्यान किया गया है: यहूदा ''सिर के बल गिरा, और उसका पेट फट गया।'' ''अपने स्थान पर जाना'' का अर्थ ''अपने कामों के कारण जिस स्थान के योग्य हो वहां जाना'' है। क्योंकि यहूदा प्रेरिताई की अपनी सेवा से ''फिर गया'' (मूल में ''गिर गया''), यह समझने में कोई संदेह नहीं रह जाता कि यहूदा का ''अपना स्थान'' कौन सा होगा।[36] उस जीवन का अन्त कितना दु:खद हुआ, जिसे इतने वायदे मिले थे।

इन दो पुरुषों में से यहूदा के स्थान पर किसे नियुक्त करना चाहिए? क्योंकि पवित्र आत्मा तो अभी उन पर उतरा नहीं, फिर उन्हें परमेश्वर की पसन्द के बारे में कैसे पता चल सकता था? इसके लिए जो ढंग अपनाया गया, वह *परेशान करने* वाला है: ''उन्होंने उन के बारे में *चिट्ठियां डालीं*'' (आयत 26क)। मूल में ''उन्होंने उनके लिए चिट्ठियां डालीं'' हम पक्का नहीं कह सकते कि उन्होंने कौन सा ढंग अपनाया होगा,[37] परन्तु आज के ढंग को ध्यान में रखकर हमारे ध्यान में पर्चियां डालना या सिक्के से टॉस करने जैसा ही कुछ होगा।[38]

यद्यपि हमें उसका सुनिश्चित ढंग मालूम नहीं है फिर भी दो बातों पर ज़ोर दिया जाना चाहिए: (1) ''उनके नाम पर चिट्ठियां डालने'' का यह अर्थ कदापि नहीं कि वहां उपस्थित लोगों ने उनका चुनाव किया होगा: इन पुरुषों के मनों को शिष्य नहीं जानते थे, परन्तु परमेश्वर जानता था (2) ''उनके बारे में चिट्ठियां'' डालने का अर्थ यह नहीं कि वहां उपस्थित लोगों ने इस बात को *किस्मत* या *भाग्य* पर छोड़ दिया; बल्कि, उन्होंने निर्णय करना *परमेश्वर* पर छोड़ दिया। मैंने पहले ही सुझाव दिया था कि यहूदा के स्थान पर किसी और की नियुक्ति प्रजु यीशु द्वारा अपने प्रेरितों को पवित्र शास्त्र को समझने के लिए उनकी बुद्धि को खोलने का एक भाग हो सकता है (लूका 24:45)। हो सकता है कि प्रभु ने ही उनको यह ढंग बताया हो या प्रेरितों ने खुद ही इसे अपनाया हो, क्योंकि वे इससे अच्छी तरह परिचित थे। चिट्ठियां डालने का प्रचलन पुराने नियम में आम था।[39] प्रेरितों के दिनों में यह सुनिश्चित करने के लिए कि याजक कौन सा काम करेंगे, यही ढंग अपनाया जाता था (लूका 1:9)। पुराने नियम में कहा गया था ''चिट्ठी डाली जाती तो है, परन्तु उसका निकलना यहोवा ही की ओर से होता है'' (नीतिवचन 16:33)।

प्रेरितों 1 अध्याय के चिट्ठी डालने के ढंग के बारे में मुझे अधिक ज्ञान नहीं है, किन्तु मैं इतना जानता हूं कि एक बार पवित्र आत्मा के आने के बाद से, परमेश्वर की इच्छा को

जानने के लिए मसीहियों ने फिर कभी भी दोबारा *चिट्ठियां नहीं डालीं*![40] उन्होंने प्रारम्भिक कलीसिया में प्राचीनों और सेवकों की नियुक्ति इस ढंग से नहीं की (प्रेरितों 6; 1 तीमुथियुस 3; तीतुस 1)। शिक्षा सम्बन्धी मामलों को भी उन्होंने इस ढंग से नहीं निपटाया (15:1-31)। यदि बच्चे इस ढंग को यह जानने के लिए अपनाते हैं कि फिसलने के लिए कौन पहले जाएगा या केक पहले किसे मिलेगा, तब तो ठीक है, परन्तु इससे परमेश्वर की इच्छा को नहीं जाना जा सकता। परमेश्वर की इच्छा को जानने के लिए हम उसके आत्मा की प्रेरणा से दिए वचन से पूछते हैं। प्रेरितों 1 अध्याय में, परमेश्वर की इच्छा को जानने के लिए ''चिट्ठियां डालना'' अल्पकालीन था, परमेश्वर ने उसे मान्यता दी; आज हम ऐसा करते हैं तो उसे अंधविश्वास कहा जाएगा![41]

दोनों में से परमेश्वर ने किसे चुना? ''... और चिट्ठी मत्तियाह के नाम पर निकली, सो वह उन ग्यारह प्रेरितों के साथ गिना गया'' (आयत 26ख)। परमेश्वर की अपनी पसन्द थी।[42] मत्तिय्याह बारहवां प्रेरित बन गया। मत्तिय्याह का नाम नये नियम में फिर नहीं मिलता, परन्तु जब भी अपने अध्ययन में हम ''प्रेरितों'' के बारे में पढ़ते हैं तो मत्तिय्याह उनमें होता ही है। परम्परा के अनुसार वह इथोपिया के लिए मिशनरी बना और वहीं शहीद हो गया।[43] ऐसा हो या न हो परन्तु यह सत्य है कि वह दूसरे प्रेरितों की तरह ही ''यरूशलेम और सारे यहूदिया और सामरिया और पृथ्वी की छोर तक'' (1:8) प्रभु यीशु का गवाह बना।

प्रेरितों की संख्या बारह पूरी हो गई।[44] तैयारी भी पूरी हो गई थी। सब कुछ तैयार था। अब आत्मा के आने की बारी थी!

सारांश

जिस प्रकार प्रेरितों 2 की महान घटनाओं की घोषणा के लिए तैयारी की आवश्यकता थी; उसी प्रकार हमारे लिए भी अपने हृदयों, मनों और जीवनों को तैयार करना आवश्यक है, ताकि परमेश्वर हमें इस्तेमाल कर सके। हमें पाप में डूबे संसार के दर्शन की आवश्यकता है। हमें उन नाश हो रही आत्माओं के लिए बोझ रखना आवश्यक है। हमारे लिए उन आत्माओं को बचाने की ज्वलंत इच्छा अपने अन्दर पैदा करने की आवश्यकता है। हम तैयारी विलम्ब से आरम्भ नहीं कर सकते। तैयारी आरम्भ करने के लिए और देरी करने का साहस हममें नहीं है।

अति महत्वपूर्ण तैयारी जो हम कर सकते हैं, वह यह सुनिश्चित करना है कि क्या हमारे जीवन परमेश्वर के साथ सही हैं? क्या आपको सुसमाचार को मानने की आवश्यकता है? क्या, परमेश्वर की बिगड़ी संतान के रूप में आपको सुधार की आवश्यकता है? तो फिर यह सुधार अभी क्यों नहीं करते!

पादटिप्पणियां

[1]''सब्त के दिन की दूरी'' यहूदी शिक्षकों ने तय की थी जिसके अनुसार कोई यहूदी सब्त के दिन केवल इतना ही चल सकता था: लगभग 2,000 हाथ। क्योंकि हाथ की लम्बाई अठारह से बीस इंच तक हो सकती है, इसलिए ''सब्त के दिन की दूरी'' एक मील के तीन चौथाई से सात आठ भाग तक हो सकती है। स्पष्टतः, यीशु का स्वर्गारोहण बैतनिय्याह के निकट (लूका 24:50) हुआ, जो जैतून पहाड़ की पूर्वी ढलान पर है। बैतनिय्याह भी यरूशलेम से सब्त के दिन की दूरी से अधिक है। प्रेरितों 1:12 से स्पष्ट है कि *जैतून पहाड़* ''यरूशलेम के निकट, एक सब्त के दिन की दूरी'' पर है। इसलिए प्रेरितों को यरूशलेम तक जाने के लिए अधिक नहीं चलना पड़ा। ''सब्त के दिन की दूरी'' का प्रयोग दूरी बताने के लिए किया गया है, यह बताने के लिए नहीं कि यीशु सब्त के दिन ऊपर उठाया गया। [2]इस प्रसिद्ध दस्तावेज़ पर जुलाई 4, 1776 को, अमेरिका के संस्थापकों ने ग्रेट ब्रिटेन से स्वतन्त्रता की घोषणा करके हस्ताक्षर किए थे। इसके थोड़ी देर बाद ही स्वतन्त्रता के लिए युद्ध शुरू हो गया। आपके देश में भी बिल्कुल इसी प्रकार के दस्तावेज़ हो सकते हैं। [3]रोमी सरकार को हटाने के लिए जेलोतेस (यहूदी कट्टरपंथी) पूरी तरह समर्पित राजनीतिक संगठन था। रोमी सरकार के कर्मचारी (मत्ती, महसूल लेने वाला) और एक पूर्व जेलोतेस का मिलकर काम करना लोगों को मिलाने की प्रभु की सामर्थ को दिखाता है। [4]दूसरी सूचियां मत्ती 10, मरकुस 3 और लूका 6 में मिल सकती हैं। [5]लूका 24:53 की रोशनी में ''रहते थे'' इस बात की ओर स्पष्ट संकेत है कि अपना सामान इत्यादि वे यहीं रखते, रात बिताते और भोजन करते थे। लूका 24:53 में ध्यान दिलाता है कि दिन के समय ''वे लगातार मन्दिर में उपस्थित'' होते थे। सामान्यत: यह माना जाता है कि 1:14 और 1:15 में उल्लेखित सब लोग मिलकर उस अटारी में रहते थे, परन्तु पवित्र शास्त्र हमें ऐसा नहीं बताता। बल्कि, 1:14 यह बताता है कि प्रेरित कुछ विशेष लोगों के साथ प्रार्थना किया करते थे। क्योंकि प्रेरित लगातार मन्दिर में रहते थे इसलिए हो सकता है कि वे मन्दिर में ही प्रार्थना करते हों। फिर, 1:15 वाले लोग, मन्दिर के किसी भाग में इकट्ठे हुए हो सकते हैं। [6]कइयों का अनुमान है कि यह यूहन्ना मरकुस की माता का घर था (12:12)। [7]यीशु ने इससे तीन *वर्ष* पूर्व कहा था कि राज्य ''निकट'' है, परन्तु यह अभी तक आया नहीं था। [8]क्योंकि यीशु ''पांच सौ से अधिक भाइयों को एक साथ दिखाई दिया'' था (1 कुरिन्थियों 15:6), ये 120 लोग मसीह के उन अनुयायियों में शामिल नहीं थे। अन्य सम्भवत: गलील में होंगे। [9]लूका 10:38. [10]1 कुरिन्थियों 9:5.

[11]मत्ती 27:55, 56; लूका 8:2, 3. [12]मरकुस 15:40; यूहन्ना 19:25. [13]लूका 23:55; 24:10. स्पष्टत: इन सूचियों में काफी कुछ समझा जा सकता है। क्योंकि यीशु के भाई भी वहां थे, इसलिए यह भी सम्भव है कि स्त्रियों में उसकी बहनें भी हों (मत्ती 13:56)। [14]एक आरम्भिक परम्परा के अनुसार मरियम, यूहन्ना के साथ इफिसुस में गई और वहीं उसकी मृत्यु हुई। [15]1 कुरिन्थियों 15:7. याकूब, यीशु का सौतेला भाई था। उनकी मां (मरियम) एक ही थी, परन्तु पिता एक नहीं था (यीशु का पिता परमेश्वर था; याकूब का पिता यूसुफ था)। यह याकूब यरूशलेम में कलीसिया का ''ख भा'' बना (गलतियों 2:9) और उसने याकूब की पत्री लिखी। [16]चेलों ने यीशु से कहा कि वह उन्हें प्रार्थना करना सिखाए। परन्तु, मसीह की निजी सेवकाई के दौरान उनके द्वारा की गई प्रार्थना का कोई उल्लेख नहीं मिलता। मरकुस 14:38-40 में जब यीशु ने उन्हें प्रार्थना करने के लिए कहा तो, वे सो गए थे! [17]यीशु ने ज़ोर देकर कहा कि जो उसे अस्वीकार करते हैं, उनका न्याय उसके वचन के अनुसार होगा (यूहन्ना 12:48)। यह सत्य का वचन है जिसका उसने अपने प्रेरितों पर प्रकाश किया (तु. यूहन्ना 16:13)। [18]एक बार राज्य/कलीसिया की स्थापना हो जाने, और प्रेरितों के मरने के बाद, एक प्रकार से उन्होंने अपने सिंहासनों पर बैठकर यीशु के साथ शासन करना और जिन बारह गोत्रों ने प्रभु को रद्द किया था, उनका न्याय करना आरम्भ कर दिया। अब उनके स्थान पर किसी और को नियुक्त करने की आवश्यकता नहीं थी। [19]''भाइयों'' व ''भाइयो'' शब्द का प्रयोग दो बार किया गया है - एक बार आयत 15 और एक बार आयत 16 में। पुस्तक में इस शब्द का प्रयोग यहां पहली बार मिलता है। [20]पवित्र शास्त्र को आत्मा की प्रेरणा के बारे में यह ठोस हवाला है।

[21]कुछ लोगों का दावा है कि यीशु को पकड़वाने के विशेष काम के लिए यहूदा को चुना गया। क्या पतरस को भी चुना गया था कि वह मसीह का इन्कार करे? क्या बाकी के चेलों को यह मनवाने के लिए चुना गया था कि उनमें से सबसे बड़ा कौन है, वे आपस में बहस करें? यीशु उनकी निर्बलताओं को जानता था, पर उसने उनकी क्षमता भी देखी। यह बात जिस प्रकार दूसरों पर लागू होती है, उसी प्रकार यहूदा पर भी। हमारे सामने हर तरह के संकेत हैं कि यहूदा में काफी कुछ कर सकने की क्षमता थी। यहूदिया से होने के कारण, सम्भवत: वह उनसे अधिक शिक्षित था, जो गलील से थे (1:11)। यीशु ने जो आदर उसे दिया उसका इसी बात से पता चलता है कि उसे यीशु और उसके चेलों के धन की सम्भाल करने की ज़िम्मेदारी दी गई थी (यूहन्ना 12:6; 13:29)। [22]''आरम्भ से ही शैतान'' वाक्यांश को वे लोग इस्तेमाल करते हैं जो यह मानते हैं कि परमेश्वर की संतान उसके अनुग्रह से गिर नहीं सकती। यीशु ने यहूदा को ''शैतान'' कहा (यूहन्ना 6:70, 71), किन्तु उसने पतरस को भी तो ''शैतान'' कहा (मरकुस 8:33); दोनों वाक्यों के भाव से यह अर्थ निकलता है कि उन्होंने शैतान को अपने ऊपर अनुमति दी थी। बाइबल बताती है कि शैतान ने यहूदा के मन में यह डाला कि वह यीशु को पकड़वाए और यह कि ''शैतान उसमें समा गया'' (यूहन्ना 13:2, 27)। परन्तु बाइबल यह नहीं कहती कि यहूदा ''आरम्भ से ही शैतान था।'' [23]बहुत से आधुनिक अनुवाद इस का संकेत 18 व 19 आयतों को कोष्ठक में रख कर देते हैं। हिन्दी बाइबल में कोष्ठक का प्रयोग नहीं है, परन्तु इन आयतों के शब्दों को इस ढंग से लिखा गया है जिससे यह स्पष्ट हो जाए कि वहां पतरस नहीं बोल रहा। पतरस के लिए वहां उपस्थित लोगों को यह समझाने की आवश्यकता नहीं थी कि यहूदा का क्या हुआ। पतरस ने अरामी भाषा के लिए ''*उनकी भाषा*'' शब्द का प्रयोग नहीं करना था। उसे श्रोताओं को ''हकलदमा'' का अर्थ बताने की भी आवश्यकता नहीं थी। [24]यह अरामी भाषा का शब्द है। इसको ''ह'' की आवाज़ के साथ और उसके बिना भी लिखा जा सकता है। [25]जो लोग बाइबल को परमेश्वर का वचन नहीं मानते वे यह ''प्रमाणित'' करने के लिए कि ''बाइबल अपने आप में ही उलझती है'' इन दो वृत्तांतों का प्रयोग करते हैं। जबकि, प्रत्येक वृत्तांत में वह बात विस्तार से बताई गई है, जो दूसरे में नहीं है। उदाहरण के लिए, मत्ती 27:8 बताता है कि याजकों ने खेत मोल लिया, जबकि प्रेरितों के काम का अध्याय एक बताता है कि यहूदा ने लिया। दोनों वृत्तांतों को इकट्ठा करने पर, हमें समझ आता है: याजकों ने यहूदा के धन से वह खेत मोल लिया; इस प्रकार वैधानिक तौर पर वह खेत यहूदा का ही था। फिर मत्ती 27:8 में कहा गया कि वह खेत ''लहू का खेत कहलाता है'' क्योंकि इसने यहूदा का लहू सोख लिया था। मत्ती एक बात बताता है, और लूका उसके साथ दूसरी भी बताता है। [26]यहूदा को यह धन यीशु को पकड़वाने के लिए दिया गया था (मत्ती 26:15)। [27]यहूदा ने रस्सी या ऐसी किसी और चीज़ से फंदा लगा लिया होगा। [28]कुम्हार का खेत उस खेत को कहा गया है, जहां से मिट्टी के बर्तन बनाने वाला मिट्टी लेता था। जब कुम्हार खेत का इस्तेमाल कर लेता था तो, मूलत: खेत किसी काम का नहीं रहता था (आज इसकी तुलना उस इलाके से की जा सकती है जहां खानों से खनिज निकाल लिया गया हो और वह बेकार पड़ा हो)। इसके अलावा यह बात भी थी कि उस स्थान पर यहूदा की हड्डियां बिखरी पड़ी होंगी, जिससे उस खेत का मूल्य और भी कम हो गया होगा, और उसे चांदी के तीस सिक्कों से खरीदा जा सकता था। आज भी उन कब्रिस्तानों को जहां निर्धन लोग जाते हैं, अक्सर ''कुम्हार के खेत'' कहा जाता है। यह शब्दावली मत्ती 27:7 से ली गई है। [29]कुछ भविष्यवाणियों में भविष्य की घटनाओं के बारे में स्पष्ट बताया गया है (देखिए 2:16)। कुछेक में इन्हें भविष्य के प्रतिरूप या प्रतिबिम्ब में दिखाया गया (तु. इब्रानियों 8:5; 10:1)। इस बात पर ज़ोर देना चाहिए कि मुझे या आपको यह व्याख्या करने का अधिकार नहीं है कि भविष्यवाणी कौन सी है और कौन सी नहीं, और न ही यह कि भविष्यवाणी का पूरा होना क्या है। दूसरी ओर, ''पवित्र आत्मा यदि चाहे तो उसकी व्याख्या कर सकता है।'' [30]आज बहुत से धार्मिक गुटों में लोग स्वयं को उन बारहों के उत्तराधिकारी बताते हैं परन्तु, उनमें वे योग्यताएं नहीं पाई जातीं!

[31]मूल में 1:21 के लिए एक आंशिक रूप में *अंथ्रोपॉस* नहीं बल्कि निश्चयात्मक अनेर है। ('पुरुष' 'स्त्री') व्यापक रूप नहीं बल्कि निश्चयात्मक ... (''स्त्री'' ''पुरुष'') है। [32]इस योग्यता के सम्बन्ध

में, गवाह का ''उत्तराधिकारी'' होना असज़्भव है। हम फिर कहते हैं, ये योग्यताएं आज किसी में भी नहीं मिलतीं। [33]''बरसबा'' का मूल अर्थ है ''सबा का बेटा।'' शायद इस नाम का अर्थ ''सब्त का बेटा'' है। इसका यह उपनाम शायद इसलिए था क्योंकि उसका जन्म सब्त के दिन हुआ। 15:22 में इसी उपनाम के एक और व्यक्ति का उल्लेख है। हो सकता है कि यह उपनाम उस समय वहां आम प्रचलित हो जैसे ''छोटू'' या ''राजू'' या कोई और ऐसा नाम। यह मानने का कोई कारण नहीं कि इन दोनों व्यक्तियों का आपस में कोई सज़्बन्ध था। [34]''यूसुफ'' उसका इब्रानी नाम था, और ''यूसतुस'' उसका यूनानी नाम था। लोगों के नाम आम तौर पर एक से अधिक होते थे। [35]यूसुफ बरसबा के बारे में बहुत सी कथाएं मिलती हैं। एक के अनुसार उसने सांप का ज़हर पीया और उसे कुछ नहीं हुआ। एक कथा के अनुसार वह नीरो की कैद में रहा और बाद में छूट गया। परन्तु, पवित्र शास्त्र में उसके बारे में अधिक नहीं कहा गया। लूका द्वारा उसे परिचित करवाने के बाद हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि, चाहे वह उन बारह की तरह नहीं चुना गया था, परन्तु प्रारज़्भिक कलीसिया में वह एक विशिष्ट व्यक्ति बन गया था। यहां हमारे लिए शिक्षा है: जब यूसुफ बरसबा को प्रेरित नहीं चुना गया, तो न तो वह क्रोधित हुआ और न ही छोड़ कर गया! [36]हाल ही के कुछ वर्षों में, मैं कई ऐसे लोगों से मिला हूं जिनको यह सोचना अच्छा लगता है कि सज़्भवत: यहूदा का उद्धार हो गया। एक व्यक्ति हठ कर रहा था कि क्योंकि उसके पकड़वाए जाने के बारे में तो पहले ही बताया गया था, इसलिए इसके लिए यहूदा को दोषी नहीं माना जा सकता। अध्याय 2 में पतरस ने यहूदियों को बताया कि यीशु की मौत के बारे में पहले ही बताया तो गया था, परन्तु फिर भी वे उसे मारने के दोषी थे। यहूदा के अन्त के बारे में यीशु के कथन सभी शंकाएं दूर कर देते हैं। देखिए मत्ती 26:24; यूहन्ना 17:12. [37]कमेन्ट्रियों में इस पद्धति के बारे में कई सुझाव दिए गए हैं। कुछेक का सुझाव है कि इस ढंग में सफेद और काले पत्थर इस्तेमाल किए जाते थे। कुछ सुझाव इसे महायाजक द्वारा प्रयुक्त किए जाने वाले और ऊरीम और तुज़्मीम के साथ मिलाते हैं। ये सभी अनुमान हैं। परन्तु, शास्त्र कहता है कि ''*उन्होंने* चिट्ठियां डालीं'' तो उसी आधार पर हम चिट्ठियां डालने की पद्धति को निकाल सकते हैं। [38]यदि आप के इलाके में कोई और ढंग अपनाया जाता है तो आप उसी को ध्यान में रख सकते हैं। [39]लैव्यव्यवस्था 16:8; गिनती 26:56. यहोशू 7 में भी लगभग ऐसा ही अवसर था जब यह ढंग अपनाया गया। कई तो महायाजक द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले ऊरीम और तुज़्मीम वाला ढंग भी अपनाते होंगे। [40]यह ''पुराने युग का अंतिम कार्य था।'' (रिक ऐचले)।

[41]जब हमें ऐसे निर्णय भी लेने पड़ें जिनका वर्णन परमेश्वर के वचन में नहीं है, तो भी उसके वचन को सीखने के ढंग के प्रयोग को उसकी स्वीकृति है, जैसे कि प्रौढ़ मसीही साथियों से बात करना या ''मार्ग के ज़ुलने'' की इच्छा करना (1 कुरिन्थियों 1:6-9)। महत्वपूर्ण निर्णय को भाग्य के सहारे छोड़ना, निर्णय लेने के अपने दायित्व से पीछा छुड़ाना है। [42]आश्चर्य है, कि कुछ लोगों का मानना है कि प्रेरितों ने मत्तिय्याह को चुनकर *गलती* की थी। और वे इस बात पर ज़ोर देते हैं कि परमेश्वर ने तो पौलुस को बारहवां प्रेरित चुना। परन्तु जो योग्यताएं पतरस ने बताईं, वे पौलुस में नहीं थीं। (वह यीशु के साथ और उसके चेलों के साथ नहीं रहा था)। पौलुस एक प्रेरित *था* (जैसे उसने अपनी कई पत्रियों के आरज़्भ में ज़ोर देकर कहा है), बल्कि वह तो *विशेष* प्रेरित *था* - जिसे अन्यजातियों के लिए चुना गया। क्योंकि 'प्रेरितों के काम' पुस्तक का अध्याय 1 घटना के कम से कम तीस वर्ष बाद लिखा गया, और पौलुस को प्रेरित बहुत देर के बाद चुना गया, इसलिए लूका को आसानी से अपनी गलती समझ में आ सकती थी। पर उसने कोई गलती नहीं की थी। मत्तिय्याह ''उन ग्यारह के साथ गिना गया;'' वह ''उनकी गिनती में'' आ गया, वह बारह में से एक हो गया। [43]एक परज़्परा के अनुसार वह उन सत्तर में से था (लूका 10:1)। यह सत्य भी हो सकता है, क्योंकि प्रेरिताई के लिए उसी व्यक्ति को चुना जाना था जो यीशु की सेवकाई में उसके साथ-साथ रहा हो। [44]प्रेरितों को फिर से ''बारह'' करके जाना जाने लगा (प्रेरितों 6:2)।